वैदिक ऋचाओं में व्यवहार की मीमांसा

अपौरुषेय वैदिक साहित्य का लक्ष्य मानव मात्र का कल्याण करना है अत: वेद किसी देश विशेष की भाषा में न होकर वैदिक-संस्कृत में निबद्ध हैं। अत: मैनें "वेदानां-महत्वम्" नामक श्लोकों में लिखा है :-

" इन्द्रियाणां विकासार्थं पंचभूतनियोजनम् ।
व्यवहारस्य सिद्ध्यर्थं सृष्टयादौ ब्रह्मणा कृतम् ।।
तथैव मनसा क्रान्त्यै ज्ञानमावश्यकं मतम् ।
ईश्वरीयमिदम् ज्ञानं वेद शब्देन कथ्यते ।।

जैसे इन्द्रियों के विकास के लिए पंचभूत, वैसे ही व्यवहार में ज्ञान के विकास के लिए 'ईश्वरीय प्रेरणा से श्रृषियों (अग्नि, वायु-आदित्य अंगिरा) के हृदय में वैदिक ज्ञान विश्व कल्याण के लिए प्रकाशित हुआ।

वैदिक ऋचायें कंठस्थ करना मात्र पर्याप्त नही, उन्हें जीवन में उतारने में ही ज्ञान की सार्थकता है। अत: कहा गया है -**"योऽर्थज्ञ इत् सकलं भद्रमश्नुते"** अर्थात् अर्थज्ञ ही अपना कल्याण और संसार का मंगल कर सकता है। ज्ञान की सार्थकता उसके व्यावहारिक होने में ही है। ज्ञान और विज्ञान का अपार सागर है वैदिक साहित्य किन्तु अपनी क्षमताओं के अनुसार ही मानव उससे लाभान्वित हो सकता है।

वर्तमान संसार में अनेक क्षेत्रों में आशातीत सफलतायें मिली हैं। नित्य नये वैज्ञानिक अविष्कार मानव को चमत्कृत कर रहे हैं। वह चन्द्रमा पर उतर गया, वहाँ जीवन की खोज में भटकने के साथ-साथ अन्य ग्रहों व उपग्रहों में जाने की योजनायें बना रहा है। वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण वह अन्तरिक्ष युग में गर्वोन्नत होकर अपने अविष्कारों में लगा है। परमाणु बमों एवं एटमिक शक्ति से सम्पन्न होकर वह पलभर में सृजन को विनाश में बदल सकता है। क्लोनिंग और जीन अभियान्त्रिकी का संवाहक आज अपने बुद्धि वैभव पर मतवाला हो गया है। किन्तु इस वैज्ञानिक उपलब्धि के बाद भी अशान्त, तनावग्रस्त और अतृप्त बन लहरों की भाँति भटक रहा है।

क्या उसने कभी अपनी अशान्ति के समाधान के विषय में कुछ सोचा? यदि सोचा भी तो मात्र आँख मूँद कर विचलित भाव से बैठना और ऊपरी आडम्बरों को सम्पन्न करना ही उसकी भक्ति की सीमा है। ईश्वरीय, सृष्टि का दोहन करना और अधिकाधिक लाभ अर्जित करना ही उसकी सीमित बुद्धि में आता है। चाहे भारत हो या पश्चिमीय उन्नत देश, वैदिक ज्ञान और विज्ञान पर कोई गंभीरता से विचार नही करता, केवल वैज्ञानिक उपलब्धियों के सहारे ही कोई देश उन्नत नही कहला सकता। समुन्नत बनने के लिए वैचारिक ऊर्जा अत्यावश्यक है, और यह वैचारिक ऊर्जा हमें वैदिक साहित्य

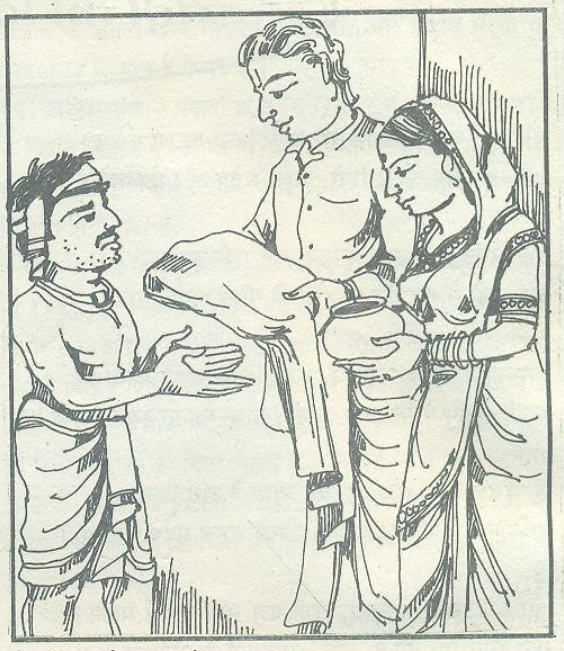

से ही प्राप्त हो सकती है।

संसार के समस्त धर्मो का मूलोद्गम है वैदिक साहित्य अत: स्मृतिग्रन्थों में कहा गया है -

"वेदात् धर्म: प्रवहति शैलादभि नदी यथा"

अर्थात् पर्वत से नदियों के समान संसार के समस्त धर्म वैदिक पर्वत से नदियों की भाँतिप्रवाहित हैं। वैदिक साहित्य में जो मानव कल्याण की ऋचायें हैं वे व्यावहारिक जीवन का उन्नयन करने के लिए हैं -

स्वयं वाजिंस्तन्वं स्वयं यजस्व स्वयं जुषस्व यजु. २३/१५

अर्थात् हे मानव तुम बोध चाहने वाले बनो। अपने जीवन का निर्माण करते हुए अपने चरित्र को उज्ज्वल बनाओ।

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथ:।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्य :।। अथर्व. ३/३०/४

अर्थात् जिससे व्यवहार करने वाले साधकों में विरोध न हो, और पारस्परिक द्वेष न हो, ऐसे कल्याण मार्ग का उत्तम ज्ञान मानव मात्र के लिए प्रस्तुत है।

ओम् अपक्रामन् पौरुषेयाद् अथर्व. ७/१०५/१

पौरुषेय अर्थात् सामान्य मानवों द्वारा करने योग्य कर्मों को छोड़कर दिव्य नैतिक नेतृत्व स्वीकार करना चाहिये। मित्रों के साथ श्रेष्ठ नैतिक अनुशासन के अनुरुप आचरण करना चाहिये।

ओं संगच्छध्वं संवदध्वं ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त

अर्थात् हम सब प्रेम से मिलकर ज्ञानवान बनने का संकल्प

करें, तथा परस्पर सद्व्यवहार करते हुए कर्तव्य निष्ठ रहें तथा पूर्वजों द्वारा दिखाये गये सुमार्ग पर चलें

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि. यजु.१/५

हे परमेश्वर ! हम सब आप द्वारा प्रकाशित सन्मार्ग के पथिक बनें। जैसे आप व्रतपति हैं वैसे ही हम सब भी सत्यव्रत के पालने वाले हों, तथा सभी प्राणियों को सुख पहुँचाने वाले हों। वैदिक सुवाच्च व्यवहार में लाने के लिए ही हैं यदि मूढजन इन प्रेरणाओं को क्रियात्मक रूप नही देते वही अशान्त बन संसार सागर में तड़पते रहेंगे।

आचरण दो प्रकार का है, सत्य और असत्य का, जो मेघावी जन मन-वचन-और कर्म से सत्य का आचरण करते हैं वे देव कहलाते हैं तथा असत्य का आचरण करने वाले आसुरी पद के अधिकारी हैं वैदिक ऋचायें सर्वत्र मानव से सुपथ पर चलने का आवाहन करती हैं। अत: मानव को नित्य स्वाध्याय, मन और चिंतन करते हुए अपने क्षणिक जीवन को उन्नत बनाना चाहिये। सर्वत्र न्यायपथ पर चलने-चलाने का उद्बोधन एवं उसका जीवन में अनुपालन जीवन को सार्थक बनाने के लिए, कोरे पाठ से कुछ लाभ नही जब तक कि इन्हें व्यावहारिक जीवन में न लाया जाये। किसी दीन दुखी पर यथाशक्ति उपकार करना, प्यासे को जल दान, अज्ञानी को विद्यादान निर्धन को धन दान, वस्त्रहीन को वस्त्र दान, एवं मर्यादा में रहते हुए यथोचित् करना मानव धर्म है।

वैदिक शिक्षा को व्यवहार में लाने के लिए जागरुकता के साथ-साथ सुसंस्कृत और आचार वान होना अपेक्षित है।

'' अक्रोधेन जयेत् क्रोधं, असाधुं साधुना जयेत्।
जयेत् कदर्यं दानेन, जयेत् सत्येन नानृतम् ।।

अर्थात् - क्रोध को अक्रोध से, असाधु को साधुता से कंजूस को दान से तथा सत्य से झूठ को जीतना चाहिये,

चाहे वैदिक साहित्य की शिक्षायें हों या शास्त्रों की नीतिवचन हों, या प्रवचन, साहित्य की शिक्षायें हों या समस्त धर्मग्रन्थों के वचन, सभी का लक्ष्य है, व्यवहारिक शिक्षा देना तथा मनुष्य का कार्य है इन सुवाच्चों का कर्म द्वारा अनुवाद करना, जिसमें वह सर्वाधिक पिछड़ा हुआ है, इसी कारण उसकी सारी वैज्ञानिक उपलब्धियाँ उसे अमंगल और अनर्थ की खाइयों में ढकेल रही हैं।

उसे अपनी उपलब्धियों का सिंहावलोकन करके, इनकी समीक्षा करनी चाहिये। अशान्ति का मूल कारण है उसका अनात्म परक होना। आत्मज्ञान का आधार है अध्यात्म, तथा अध्यात्म का साधक है वैदिकज्ञान, इस वैदिक ज्ञान के विकास केलिए, प्रतिदिन उसे मंत्रों के अर्थ पर विचार कर तदनरुप अपना आचरण बनाना चाहिये। वैदिक ऋचाओं की व्यवहार मीमांसा से ही विश्व का कल्याण और मंगल संभव है। केवल भौतिकवाद समस्त अशान्तियों का मूल है। सारे संसार में वेदों का प्रसार करने के लिए विद्वान उपदेशकों का धर्मप्रचार के लिए दूर दूर जाना अपेक्षित है। इसके साथ ही नेताओं के लिए भी वैदिक ज्ञान आवश्यक है, जिससे वे प्रजा का अनुरंजन कर उसे भी सत्पथगामिनी बना सकें। किन्तु इसके लिए उसे सर्वप्रथम स्वयं का सुधार कर वेदानुगामी स्वयं को बनाना होगा। यदि ऐसा नही कर सके, तो इस अशान्ति का उत्तरदायी वह स्वयं है ईश्वर नहीं।

'' खुद मुसीबत मोल ली इन्सान नें
और इल्ज़ाम आ गया भगवान पर।''

डा. महाश्वेता चतुर्वेदी
प्रोफेसर्स कालोनी श्यामगंज, बरेली-२४३००५